हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श.

प्रा. डॉ. एम. ए. येल्लुरे,
बी.एस.एस. कला विज्ञान एवं वाणिज्य
महाविद्यालय, माकणी, ता. लोहारा,
जि. उस्मानाबाद.
Email ID – drmayellure@gmail.com.
मो. नं. 9403392105.

शोध सार:

आदिवासी साहित्य का अध्ययन, मनन, चिंतन और अनुशिलन के बाद अंत में निष्कर्ष रूप में कहते है कि, आदिवासी समाज सदियोंसे जातिगत भेदो वर्ण व्यवस्था, विदेशी आक्रमणो, अंग्रेजो और वर्तमान में सभ्य कहे जानेवाले समाज द्वारा दूरदराज जंगलो और पहाडो में खदेडा गया है. अक्षर ज्ञान न होणे के कारण यह समाज सदियोंसे मुख्य धारा से कटा रहा, आदिवासी की लोककला और उनका साहित्य ऐसे तो मौखीकी रहा है और इसका कारण रहा उनकी भाषा की अनुरूप लिपी का विकसित न हो पाना. यही कारण साहित्य जगत में आदिवसी रचनाकार और उनका साहित्य गैर आदिवासी साहित्य की तुलना में काम मिलता है.

बीज शब्द: आदिवासी, साहित्य, समस्या

प्रस्तावना :

आज भी आश्चर्य कि बात है कि, भारत में आदिवासी समाज में जितना अध्ययन, मनन, चिंतन विचार विमर्श होणा आवश्यक है, उतना नहीं हो रहा है. आदिवासी विमर्श 20 वी सदि के अंतिम दशकों में शुरू हुआ. आज भी इसके केंद्र में आदिवासीयों के जल जंगल जमीन और जीवन की चिंताएँ है. कहा जाता है कि, 1991 के बाद भारत में शुरू हुए उदारीकरण और मुक्त व्यापार की व्यवस्थाओंने आदिम काल से वंचित आदिवासियों की लुट कारस्थानी खोल दिया. आज भी बडी संख्या में झारखंड, छत्तीसगढ, दार्जीलिंग आदि इलाकों में लोग बडे पैजामे पर विस्थापनको जन्म दिया, इतनाही नही तो उन्होंने सचेत रुपये अपने समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक हीतों के रक्षा के लिए आवाज उठाना प्रारंभ किया. और उन्हों अपने नेताओंकी पहचान की. साथ ही आदिवासी साहित्य की मुख्य विशेषता है.

सबसे महत्वपूर्ण बाब यह है कि, कई मुख्य धारा के लोग जहाँ आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक रूप में ताकतवर होते है, वही मुख्य धारा के अंदर और बाहर का जीवन व्यतीत कर रहे लोग कमजोर ही जाहीर है, क्योंकी आदिवासी लोग आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक तीनों दृष्टीयों से कमजोर होते है. तो जाहीर है, वही दुसरी ओर उसमें कही न कही मुख्य धारा की साजीश अथवा षड्यंत्र की भी प्रभावकारी, प्रभावली भूमिका होती है. इसका सर्वोत्तम उदाहरण भारत का आदिवासी समाज है, जो मुख्यता राजनीती और मुख्य धारा के निर्माणकर्ताओंका जिस तरह से शोषण किया जाता है उसका प्रत्यक्ष उदाहरण है 'संजीव की कहानी', 'पाँव तले की दूब' और भालचंद्र जोशी की 'पहाडोंपर रात' इन में दिखाया है कि किस प्रकार विकास के नाम पर आदिवासी समाज का एक लंबे समय से शोषण किया जा रहा है. प्रसिद्ध आदिवासी विचारक वाहरू सोनवणे मानते है कि इन लोगों के विकास के लिए बनाई जा रही नितीयाँ ऐसी नहीं होती है कि उन्हे किसी रूप में स्वीकार कर लिया जाए.

2) आदिवसी कहानी साहित्य :

इस आदिवासी कहानीयोंके अंतर्गत संजय कि 'कमरेड का कोट' विजेंद्र अनिल कि 'विस्फोट', विजयकांत कि 'बीच का संसार', अंजना रंजन दाग कि 'मुआवजा', मदन मोहन कि 'बच्चे बडे हो रहे है', रामस्वरूप अणखी कि 'जोहाड बस्ती', हृदयेश कि 'मजदूर', प्रेमपाल शर्मा कि 'सुभेदार', हृषिकेश सुलभ कि 'पत्थरकट', अरुण प्रकाश कि 'भैय्या एक्स्प्रेस' आदि कहानियाँ खेतिहर और दिहाडी मजदूरोंके जीवन संघर्ष का चित्रण करते हुए दिखलाती है कि किस प्रकार मुख्य धारा के अंदर रहते हुए भी वे हाशिये का जीवन व्यतीत करणे को विवश है.

'कमरेड का कोट' और 'बीच का संसार' जैसी कहानियाँ के नायक अपने उपर होनेवले आक्रमण का अहसास होने बाद ही अपने सुमदाय के लोगोंका नेतृत्व संभाल लेते है, और वे चाहते है कि, मुख्य धारा का समाज उनकी समस्यावों को समझे उन्हे उचित मजदुरी दे. 'कमरेड का कोट' इनके लोगोंके नेतृत्व के सवालों को गंभीरता के साथ उठाते है कि किस प्रकार कि लडाई का वास्तविक नेतृत्व मोर्चे पार लड रहे है. कार्यकर्ता के हाथ में हो अथवा पार्टी के नेतावोंके हाथ में जिन्हे संघर्ष की वास्तविक स्थितीयों और भयावता का पता है और उन्ही संघर्ष भूमिका भी जनभाषा 'ताई की बाली' की ... ''आलोकजी को सुकून मिला एका एक हम हिंदी एक तो एक तो जड सॅमजेन शकेता के बाल बोलने और लिखने पढणे नही सकता यु कैरी ऑन कहकर उन्होने

चारमिनार सिगरेट सुलगाली है. उन्हे बडे प्यार से एक सिगरेट कमलकांत की ओर भी थमाई, सिगरेट खाई ये कॉम्रेड.''1

अब आदिवासी जीवन पार बहुत लिखा जा रहा है, सोचा जा रहा है, बहस और संवाद की गुंजाईश बन गई है. धीरे धीरे यह एक विमर्श का रूप धारण करता जा रह है. 'कब तक पुकार' में जंगल की रुखडी का रोह लेनेवाले सुखराम के माध्यम से इंसानियात की रुखडी की पहचान शुरू हुई थी. उसकी कजरी प्यारी और चंदा जिसमें तेह रह छलकता रहा करता. जो उन्हे इन्सान बनाएँ हुए था, वे सभी गंगाजल की भान्ति पवित्र तथा सूर्य की किरनोंकी भान्ति प्रकाश और तेजोमय थी. इसका विकास इस दो दशक पूर्व के कथा साहित्य में दिखाई पड रहा है.

एक बात यहाँ देखना है कि "श्री प्रकाश मित्र के उपन्यास 'जहाँ बाँस फुलते है' को देखना होगा, जो सुदूर उत्तर पूर्व मिजो जनजाति एवं लुशाई पहाडीयोपर रहनेवाले आदिवसी जनजाति को केंद्र में रखता है. यहाँ भी यही तथ्य उभरता है – "भूख का मारा मिजो वरशोन्तक इंतजार करता है, फिर जंगल को साफकर धान लगया जाता है. फसल जब तैयार होने को होते है तो अपनी झोपडी बन जाता है. एक दिन इलाके के पुराने जमीनदार ... अपने साथीयोंके साथ आकर धमकाते है. इनके घरोन्को उजाड फसल काटकर ले जाते है और खेतीलायक जमीन दो चार साल के लिए कब्जा कर लेते है.''2

3) आदिवासीयों द्वारा आदिवासी विमर्श :

मित्रो पिछले दो दशको में हिंदी संसार में आदिवासी लेखको, विशेषकर झारखंड क्षेत्र के लेखकोने अपनी पैठ और पहचान बनाई है. आज आदिवासी की धार आँन्चलिक क्षेत्रिय और राष्ट्रीय स्तर तक असरदार बन चुकी है. हेरॉल्ड एस. टोप्पो और रामदयाल मंडा ने पत्र-पत्रिकाओमें अपनी नियमित उपस्थिति के जरिये 'जंगल गाथा' से लेखक-पत्रकार के रूप में अपनी विशिष्ठ पहचान बनाई है. इतनाही नही तो सामाजिक-राजनीतिक विश्लेषण के लिहाज से एन. ई. होरो, निर्मल मिंज रोज केरकेट्टा, प्रभाकर तिर्की, सूर्यसिंह बेसरा और महादेव टोप्पो आदि का योगदान अर्थपूर्ण और महत्वपूर्ण है. आज पत्रकारिता में विवेचन साक्षात्कार या रिपोर्ताज की शैली में अपने संवाद को प्रभावी बनाने लिहाज से वासवी, दयामनी, बरला, सुनिल मिंज और शिशिर टूडूने अपनी प्रभावी उपस्थिती दर्ज करवाई है. इन में अपने समाज वर्ग राजनीतिक-संस्कृतीसे बाहर की दुनिया की मसलोन्के बारे में खामोशी दिखती है. और यही कारण है कि देश और दुनिया की बेहतरि के लिये इनकी रचनाएँ और सपने अपने परिवार तक सीमित है. अगर आदिवासी विमर्श को साहित्य लेखन की धरातलपर देखे तो आदिवासी रचनाशिलता मुख्यरूपसे – कविता, कहानी, उपन्यास और संस्मरण के धरातलपर प्रकट होती है.

4) आदिवासी की अस्मिता :

यह विमर्श सबसे नवीनतम है. अनेक वर्शोन्से हाशिये पर रखे गये आदिवासी समुदाय को आज साहित्य जगत में जगह मिल रही है. और इसमें भी अच्छीबात यह है कि, इस दिशा में खुद इस समुदाय के लोगोंके द्वाराही पहल की जा रही है. इसलिये इस दृष्टीसे समकालीन कवि अपनी कविताओ में आदिवासियोन्के जीवन उनकी स्थितियो उनके संघर्ष की, उनकी आकान्क्षाओ और उनके सपनोको कविता में अभिव्यक्त कर रहे है. आदिवासी साहित्य विधाओमें 'कविता' सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधा रही है.

निष्कर्ष :

आदिवासी साहित्य का अध्ययन, मनन, चिंतन और अनुशिलन के बाद अंत में निष्कर्ष रूप में कहते है कि, आदिवासी समाज सदियोंसे जातिगत भेदो वर्ण व्यवस्था, विदेशी आक्रमणो, अंग्रेजो और वर्तमान में सभ्य कहे जानेवाले समाज द्वारा दूरदराज जंगलो और पहाडो में खदेडा गया है. अक्षर ज्ञान न होणे के कारण यह समाज सदियोंसे मुख्य धारा से कटा रहा, आदिवासी की लोककला और उनका साहित्य ऐसे तो मौखीकी रहा है और इसका कारण रहा उनकी भाषा की अनुरूप लिपी का विकसित न हो पाना. यही कारण साहित्य जगत में आदिवसी रचनाकार और उनका साहित्य गैर आदिवासी साहित्य की तुलना में काम मिलता है. अंततः स्पष्ट रुपसे कहे तो गलत नही होगा की वे लोग लगातार कोशिश में है कि, संबंधित समाज या समुदाय में उनकी भी एक सुंदर और सुस्पष्ट एक पहल और अपनी पहचान बने.

संदर्भ ग्रंथ :

1) संजय - 'कमरेड का कोट', राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली. सन 1993.
2) भालचंद्र जोशी – पहाडोपर रात : पहल – 40, जुलाई, सितम्बर 1990.
3) वीर भारत तलवार – आदिवासी विमर्श धर्म, संस्कृती और भाषा का सवाल कहा है?
4) हरिराम मीना – अस्मिता ही नही अस्तित्व का सवाल :
5) रमणीका गुप्ता – आदिवासी स्वर और नई शताब्दी
6) गंगा सहाय मीना – आदिवासी साहित्य विमर्श : चुनौतियाँ और सम्भावनाये
7) निर्मला पुतुल – नगाडे की तरह बजते शब्द.